गांधी स्मारक निधि का मासिक मुखपत्र

संस्थाकुल

जुलाई, 2023 वर्ष – 54 अंक – 4

वार्षिक सहयोग राशि : रु. 20.00
एक प्रति : रु. 2.00
कुल पृष्ठ : 12

खादी : अहिंसा का प्रतीक

आचार्य विनोबा

पुराने लोग हाथ से सूत कातते थे, तो उसमें कोई बड़ी बात नहीं थी। कुछ लोग कहते हैं कि चरखे के रहते हुए भी हमने स्वराज्य गंवाया। अब उसके बाद चरखा चलाने को क्यों कहते हो ? लेकिन वह चरखा पुराना था; आज का चरखा दूसरा है। उस चरखे के सामने कोई खड़ा नहीं था। जिस तरह चंद्र अकेला प्रकाशित होता है, उसी तरह उस समय चरखे की हालत थी। उन दिनों का चरखा लाचारी का था। शायद उसमें कुछ शोषण भी हो। हमारा चरखा वह पुराना जीर्ण चरखा नहीं है, जो मिलों के अभाव में नग्नता ढकने के लिए अनिवार्यरूप से चलता था। हमारा चरखा मिलों का पूरक भी नहीं है, जो मिलों का स्थान मान्य करके उनके कारण पैदा हुई बेकारी की समस्या को राहत के रूप में हल करने का ढोंग करता है। वह है नवयुग का संदेशवाहक चरखा। ग्रामराज्य और रामराज्य का प्रतिनिधि। हरिजन–परिजन भेद मिटानेवाला। सब श्रमों को और पंथों को और फिरकों को एक परमेश्वर के प्रेम–सूत्र में बांधनेवाला। अब हम सोचकर चरखे को अपनाते हैं। उसके पीछे चिंतन है, विचार है। समाज–रचना की एक नई तस्वीर हमारे सामने है। ...

आज सारी दुनिया की निष्ठा यंत्रविद्या में है। वैज्ञानिक इसे 'यंत्र–युग' कहते हैं। पुराने लोग कलियुग (कलयुग) कहते हैं। ऐसी स्थिति में जब हम खद्दर की बात करते हैं, तो समझना चाहिए कि दुनिया में जो विचारधारा आज चल रही है, उसके खिलाफ हमारा यह बगावत का झंडा है।

किसी भी हालत में अन्न, पानी की जगह नहीं ले सकता। अन्न की महिमा मंजूर है, लेकिन पानी की भी अपनी महिमा है। पानी की महिमा पानी में ही भरी है। वही हाल चरखे का है। हमारे सर्वोदय–विचार में प्रचलित प्रवाह के विरुद्ध होकर जाना पड़ता है। वह एक तरह से हमारी बगावत है। उस बगावत की निशानी खेती नहीं हो सकती। उसकी निशानी तो चरखा ही हो सकता है। जहां हमें खेती को स्थान देने की इच्छा होती है, वहां कई लोगों को उसके साथ चरखे को पदच्युत करने की भी इच्छा रहती है। मैं कहना चाहता हूं कि इसमें विचार–दोष है, इससे सावधान रहना चाहिए। ...

हम दुनिया के सामने जो बगावत का झंडा, क्रांतिकारी कदम, क्रांतिकारी विचार रखना चाहते हैं, चरखा उसका संकेत है। हमारी दृष्टि में इस काम का इतना महत्व है। ...

मान लीजिए, गांधी–विचारवाले रोज नियमित कातते और मरने तक कातते हैं। यह मान लिया कि 'मैंने यह व्रत लिया है, इसलिए कातता हूं और उसे छोड़नेवाला नहीं हूं।' किन्तु यदि उन्हें निश्चय हो कि 'खादी की बात हिन्दुस्तान में चलनेवाली नहीं है, कोई बेकार हो और मजदूरी चाहता हो तो भले ही काते,' साथ ही यह विश्वास न हो कि 'स्वावलंबन की दृष्टि से जैसे किसान अपने लिए अनाज खुद पैदा करता है, उसके लिए काश्त करता है, इसी तरह हमारा कपड़ा भी हमें तैयार कर लेना चाहिए, तो यह नहीं कहा जायेगा कि गांधी–विचार की दृष्टि से जो करना है, वह करते हैं। विचार तो ऐसा करना चाहिए कि चरखा एक विचार का चिन्ह है, प्रतीक है। चरखा यानी अहिंसा का विचार, अहिंसा का प्रतीक है।

रोजगारी और चरखा

आप सब जानते हैं कि अपना देश कृषिप्रधान है, और 80 प्रतिशत जनता देहात में है। आज आबादी बढ़ रही है। जिस हिसाब से आबादी बढ़ती है, उस हिसाब से जमीन का रकबा कम पड़ता जाता है। हर व्यक्ति के पीछे पहले जितनी जमीन थी, उस हिसाब से हर साल जमीन कम पड़ेगी। यह ठीक है कि पानी की योजना हो जाये, तो उत्पादन बढ़ सकता है। फिर भी देहात की जनता को जमीन से सालभर काम नहीं मिलेगा। अगर पानी का इन्तजाम हो जाये, तो भी मुश्किल से 8 महीने काम मिलेगा और न हो तो 6 महीने ही समझ लीजिए, उससे ज्यादा नहीं। वैसे बोलने को लोग बोलते हैं कि हमें हमेशा काम रहता है। यह ठीक है, काम तो होता ही है, लेकिन 8 घंटे दिन के हिसाब से काम गिना जाये तो 6 महीने तो खाली है ही, इसमें शक नहीं। और 6 महीने पूरा काम करके उनको सालभर के लिए खाने को मिले, ऐसी स्थिति तो है नहीं। इसलिए खेत को कोई पूरक धंधा अवश्य चाहिए। यह हिंदुस्तान की समस्या है। कुछ लोगों को शहरों में काम दें, नये–नये कारखाने खुल जायें –और जितने खुलने चाहिए खुल जायें – तो भी समझना चाहिए, देहात में से शहरों में 4–5 प्रतिशत लोग और आयेंगे। अभी 20 प्रतिशत हैं तो मान लीजए 25 प्रतिशत आ गये। तो भी 75 प्रतिशत तो देहातों में ही रह जायेंगे। उस हालत में उन्हें वहीं कुछ काम देना पड़ेगा।

अभी इन लोगों ने बताया कि कम्प्यूटर नाम का यंत्र निकला है। वह हिसाब–किताब कर देता है। इसके परिणामस्वरूप हजारों लोग बेकार हो जायेंगे। मशीन को तो आप टाल ही नहीं सकते, मानो ऐसा आपने मान ही लिया है। मैं कहता हूं कि इस तरह बेकार बनाने का उद्योग तो आपको हासिल हो गया, बेकारों को रोजी देने का उद्योग मिला क्या ? ...

जिस देश में केवल खेती होती है, वह राष्ट्र दुर्बल समझा जाता है। हिंदुस्तान में तो 75 प्रतिशत से भी ज्यादा लोग खेती पर निर्भर हैं। यहां की जमीन पर कम–से–कम दस हजार वर्ष से काश्त की जाती है। अमेरिका भारत से तिगुना बड़ा मुल्क है, जबकि वहां की आबादी सिर्फ 12 करोड़ है और जमीन की काश्त केवल तीन–चार सौ वर्ष से ही हो रही है। इसीलिए वहां की जमीन उपजाऊ है और वह देश समृद्ध है। लेकिन अपने राष्ट्र की जैसी स्थिति अभी बतायी, उस स्थित में राष्ट्र के काश्तकारों के हाथ में और भी धंधे दिये जायें, तभी वे संभल सकेंगे। ...

हिन्दुस्तान के किसान की आज जो हालत है, उस हालत में बेकारी का सवाल इतना बड़ा नहीं है, जितना कि अर्धबेकारी (अंडरएम्प्लायमेंट) का है। किसान के हाथ में ऐसा उद्योग होना चाहिए, जो कि चंद मिनट करना है तो कर लिया और छोड़ना है तो फौरन छोड़कर खेत में चले गये। इस तरह का उद्योग उसके घर में ही होना चाहिए। उसके बगैर हिंदुस्तान का किसान नहीं बचेगा और हिंदुस्तान की रक्षा भी नहीं हो सकेगी।

आज गरीबों को फौरन काम देने की बात सरकार कहती तो है। लेकिन मैं पूछता हूं कि आप कौन–सा काम इनको देंगे ? रास्ते बनाना, नहरें बनाना, आदि काम तो नित्य काम नहीं है। इसलिए ग्रामोद्योगों को परिपूर्ण उत्तेजन दिये बिना चारा नहीं है। ...

उत्पादनवृद्धि के लिए सादे औजार

हर कोई कहता है कि उत्पादन बढ़ाया जाये। लेकिन कैसे ? तो, यह एक सीधा–सादा औजार है। अपने घर में रख सकते हैं और कहीं भी कात सकते हैं। रेल में भी बैठे–बैठे कात सकते हैं। यह सीधा–सादा औजार हमें गांधीजी ने दिया है। ...

कपड़े के सवाल का हल

खद्दर से कपड़े का सवाल हल हो सकता है, यह बात ध्यान में नहीं आती। इसका कारण यही है कि हम पर पाश्चात्य देशों की विद्या ने जादू चलाया है। हम आजाद तो हुए हैं, लेकिन बुद्धि की आजादी एक दूसरी ही बात होती है। मुझे डर है कि वह आजादी हमें अब तक हासिल नहीं हुई है। पाश्चात्यों ने एक अर्थशास्त्र बनाया है। उसके कुछ नियम बना रखे हैं। हमें डर है कि उन नियमों में शायद खादी नहीं बैठेगी। लेकिन हर एक देश का उसकी परिस्थिति के अनुसार अलग–अलग अर्थशास्त्र हो सकता है। मेरा तो निश्चित मत है कि अगर हम चरखे को अपनायेंगे, उसके शास्त्र का जितना अनुभव आया है उसका उपयोग करेंगे, तो दो साल के अंदर हिंदुस्तान के देहात की कपड़े की आवश्यकता आसानी से पूरी की जा सकती है।

शोषणमुक्ति और श्रमनिष्ठा

आपके घर में पानी के लिए नल लगे हैं। लेकिन क्या वे बारिश की बूंद की योग्यता रखते हैं ? बारिश की बूंद छोटी भले हो, पर वह सब जगह गिरती है, इसलिए उसकी योग्यता महान है। चरखे में यह खूबी है। चरखा थोड़ी-थोड़ी संपत्ति सब घरों में देगा। अर्थशास्त्र का सबसे बड़ा सिद्धांत यह है कि संपत्ति का बंटवारा ठीक हो। संपत्ति का जितना वितरण हो, उतना ही समाज का कल्याण होगा। किसी एक के पास दौलत न रहने पाये, वह बंट जाये। यह बात खादी द्वारा ही सिद्ध हो सकती है। मिल का पैसा मिलवाले और उनके साझेदारों की जेब में जाता है। पर खादी के द्वारा उसका वितरण होता है। रत्ती-रत्ती या तिनके का ही फायदा क्यों न हो, लेकिन सबका होगा, जैसे वृष्टि की बूंदें होती हैं। जो दैवी गुण, जो व्यापकता वृष्टि में है, वही खादी में भी है।

खादी समाज में श्रम की प्रतिष्ठा का प्रतीक है। सवाल यह है कि गांवों की जिंदगी में जीवन की धड़कन और जीवन के लिए उत्साह किस तरह उत्पन्न किया जाये ? आज श्रम विवशभाव से किया जाता है, इसलिए उससे छुटकारा पाने की वृत्ति देखने को मिलती है। जब तक श्रम को नैतिक, सामाजिक और आर्थिक तीनों प्रकार की प्रतिष्ठा नहीं दी जायेगी, तब तक इस स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं हो सकेगा और गांवों का जीवन भी सुंदर, सुखमय और जीनेलायक नहीं बन सकेगा।

चरखा एक 'सिम्बल' यानी एक संकेत-चिन्ह या प्रतीक है – श्रमनिष्ठा का। दुनिया में शोषण किसलिए चलता है ? इसी लिए कि कुछ लोग श्रम करते हैं और दूसरे लोग उससे लाभ उठाना चाहते हैं। अगर सब लोग श्रम करें, श्रमनिष्ठा पैदा हो, तो शोषण खतम हो जाये और उत्पादन भी बढ़े। इसलिए गांधीजी ने यह एक छोटी-सी चीज देश के सामने रखी। आज बेकारी बढ़ रही है। इस हालत में यह चीज चले, तो घर-घर सूत होगा, कपड़ा बनेगा। लेकिन उस कपड़े का और सूत का उतना महत्व नहीं है जितना श्रमनिष्ठा का महत्व है।

चरखा अविरोधी परिश्रम का प्रतीक है। हम जानते हैं कि बिना परिश्रम के दुनिया में कोई चीज पैदा नहीं हो सकती। हममें से हर एक दुनिया की चीजें इस्तेमाल तो करता है, पर उन्हें निर्माण नहीं करता। चरखा हमें यह प्रेरणा देता है। हर एक मनुष्य कपड़ा पहनता है; अगर वह अपने कपड़े के लिए आवश्यक सूत कात लेता है, तो उससे वह सारी जनता के साथ अपना अनुसंधान रख सकता है। वैसे तो दुनिया में चीजें पैदा करने के लिए बहुत सारे यंत्र भी बनाये गये हैं लेकिन उनसे दुनिया में वर्गभेद निर्माण होते हैं, वर्ग-कलह बढ़ता है और भोग-वासना को पोषण मिलता है।

कोई भी व्यक्ति अपना भार दूसरों पर न रखे, दूसरों के कंधों पर न बैठे, जो बैठा है वह वहां से उतर जाये, तो दुनिया की बहुत सेवा हो सकती है। चरखा हमें इसी का दर्शन कराता है। चरखा कहता है कि हम सबको मजदूर बनना है। अगर हम मजदूर नहीं बनते, तो हम चोरी करते हैं, हिंसा करते हैं, दूसरों पर बोझ डालते हैं। ...

अंत में खादी तत्त्व का स्मरण कर यह लेख पूरा करेंगे। 'खादी की गादी से लड़ाई है' – इसे मैं खादी तत्त्व कहता हूं। खादी की गादी बन सकती है, यह खादी की महिमा है। परंतु यह महिमा कहीं उसी की जान न ले ले, यह ध्यान रहे। पांच-पांच सौ नंबर का सूत भारत में निकलता था, इस पर लोगों को गर्व है, मुझे भी है। ऐसा सूत कातकर भगवान की मूर्ति को अर्पण किया जाता या प्रदर्शनियों में रखा जाता, तो वह गर्व, शोभा दे पाता। परन्तु श्रीमान लोग अपनी तुच्छ देह सजाने के लिए गरीबों से इतनी अपार मेहनत करवाते थे और गरीब भी इतनी अद्‌भुत कला अल्पतम या शायद भरपूर मजदूरी के बदले में बेचकर तुच्छ मानव-देह की खुशामद करते थे। इस बात की याद भी आती है, तो मैं तो मारे लज्जा के गड़ जाता हूं। खादी वैभवशालिनी भले ही हो, पर कभी विलासी न बने। समर्थ रामदास ने कहा है – 'चातुर्य से हृदय को और कपड़ों से शरीर को सजाना – इन दोनों में श्रेष्ठ क्या है, बताइए'। – **चातुर्ये शृंगारे अंतर। वस्त्रें शृंगारे शरीर। दोहींमध्यें कोण थोर। बरें पहा।** मराठों ने इस खादी तत्त्व को किसी तरह सौ वर्ष तक याद रखा और जैसे-तैसे केवल एक सौ वर्ष उनका राज्य टिका। इस खादी तत्त्व का हमें कभी विस्मरण न हो।

(विनोबा साहित्य : पृष्ठ 271-280 और 327 से साभार)

हिन्दू राष्ट्रवाद और अखंड भारत

राम पुनियानी

क्या देशों के बीच की सीमाएं हमेशा एक–सी बनी रहती हैं ? या फिर समय के साथ बदलती रहती हैं ? कई मौकों पर साम्राज्यों–सम्राटों और आधुनिक राष्ट्र–राज्यों की सीमाओं के बीच के फर्क को जानबूझकर नजरअंदाज किया जाता है। कुछ देश हाल में अस्तित्व में आये हैं और कुछ देशों/साम्राज्यों/राष्ट्र–राज्यों का अपने–अपने क्षेत्रों में जटिल एवं लम्बा इतिहास रहा है।

अक्सर यह कहा जाता है कि हम यहां राज करते थे या हमारा राज्य यहां से यहां तक फैला हुआ था। दरअसल, हम शब्द का प्रयोग सामाजिक विकास के किसी भी चरण में लोगों के लिए किया जा सकता है, फिर चाहे वे साम्राज्यों की प्रजा रहे हों या आधुनिक राष्ट्र–राज्यों के नागरिक। हमारा सामाजिक स्वरूप भी बदलता रहा है। मानव पहले जब जानवरों को शिकार कर और कंदमूल इकट्ठा कर और उसके बाद पशुपालन से जीवनयापन करता था तब उसे शायद ही पता रहता था कि वह किस इलाके में रह रहा है। ग्रामीण समाजों और जनजातीय समूहों में लोगों की अपने निवास के क्षेत्र के संबंध में धारणा अत्यंत अस्पष्ट हुआ करती थी। जब इंसान ने खेती शुरू की उसके बाद ही साम्राज्य बने और सीमाओं का अधिक स्पष्ट निर्धारण होना शुरू हुआ।

साम्राज्यों की सीमाएं सदैव बदलती रहीं। चोल साम्राज्य और उसके प्रतिद्वंद्वी साम्राज्यों ने धरती के इस हिस्से पर राज किया। राजेन्द्र चोल के काल में चोल साम्राज्य हालांकि बहुत बड़ा हो गया लेकिन फिर भी वह देश के दक्षिण तक सीमित था। अहोम उत्तर–पूर्व में राज करते थे और उनके साम्राज्य की सीमाओं का बहुत स्पष्ट विवरण उपलब्ध नहीं है। यह जरूर ज्ञात है कि इन साम्राज्यों की सीमाएं समय के साथ बदलती रहीं और किसी राजा के उत्तराधिकारी को अपने पूर्ववर्ती के समान क्षेत्र पर शासन करने का अवसर नहीं मिलता था। प्राचीन साम्राज्यों में मौर्य साम्राज्य क्षेत्रफल की दृष्टि से सबसे बड़ा था। और शुंग वंश, जिसने इसके बाद राज किया, द्वारा शासित क्षेत्र इससे बहुत अलग था। यहां तक कि अतिचर्चित विदेशी मुगल साम्राज्य भी क्षेत्र की दृष्टि से स्थिर नहीं था। इस वंश द्वारा शासित इलाका औरंगजेब के काल में सबसे बड़ा था जब यह दक्षिण भारत तक फैला हुआ था।

अंग्रेजों के आगमन के साथ भारत की सीमाएं अधिक स्पष्ट रूप से निर्धारित हुईं और वे रियासतें, जो अपना अस्तित्व बचाए रखने में सफल रहीं भी, अंग्रेजों की दया पर निर्भर थीं। उन्होंने ब्रिटिश सत्ता से सांठ–गांठ कर राज किया। इन रियासतों को केवल औपचारिक रूप से सार्वभौमिकता हासिल थी।

अंग्रेजों का राज म्यांमार पर भी था, जो उनके साम्राज्य का हिस्सा था और बाद में एक स्वतंत्र राष्ट्र बना। ठीक ऐसा ही सीलोन के मामले में भी था जो आज श्रीलंका के नाम से जाना जाता है। औपनिवेशिक सत्ता का कांग्रेस और भगतसिंह, अंडमान जेल जाने के पहले सावरकर और नेताजी सुभाष की आजाद हिन्द फौज जैसी राष्ट्रवादी शक्तियों ने विरोध किया।

अंग्रेजों ने फूट डालो और राज करो की नीति पर अमल किया जिससे साम्प्रदायिक शक्तियां प्रबल हुईं, जो एक–दूसरे के समानांतर परन्तु विपरीत थीं। गांधीजी के नेतृत्व वाली राष्ट्रवादी शक्तियों का स्वप्न उस अखंड भारत का था, जो आज के पाकिस्तान, बांग्लादेश और भारत का क्षेत्र है। विभाजन की त्रासदी से राष्ट्रवादी शक्तियों का स्वप्न टूट गया और अंग्रेजों की देश को बांटने की साजिश सफल हुई। मुस्लिम साम्प्रदायिक शक्तियों ने मांग की कि मुस्लिम बहुल क्षेत्रों को मिलाकर पाकिस्तान बने और हिन्दू साम्प्रदायिक शक्तियां अखंड भारत पर अड़ी रहीं, जो उनके अनुसार चिरकाल से हिन्दू राष्ट्र था।

जहां हिन्दू और मुस्लिम राष्ट्रवादियों ने धर्म का सहारा लिया और दूसरे समुदाय के लोगों के खिलाफ घृणा फैलाई, वहीं राष्ट्रवादी शक्तियों को उस भारत को स्वीकार करना पड़ा जिसकी सीमाएं रैडक्लिफ ने निर्धारित की थी।

भारत धर्म निरपेक्षता के रास्ते पर चला। धर्मनिरपेक्षता की राह में कई मुसीबतें थीं क्योंकि समाज

पूर्णतः धर्मनिरपेक्ष नहीं था और सत्ताधारी कांग्रेस में बहुत से हिन्दू साम्प्रदायिक तत्त्व भी थे। नेहरू ने पार्टी के अंदर साम्प्रदायिक शक्तियों की बढ़ती ताकत के बारे में बताया था लेकिन इस मामले में ज्यादा कुछ नहीं किया जा सका, क्योंकि आरएसएस की शाखाओं में प्रशिक्षित हिन्दू सम्प्रदायवादियों का समाज और राजनीति पर प्रभाव बढ़ता गया, जिसके कारण अंततः आज की स्थिति बनी।

इन साम्प्रदायिक शक्तियों ने न केवल मुसलमानों और ईसाइयों को हाशिये पर धकेल दिया है बल्कि वे भारतीय संविधान के विरुद्ध प्रचार कर रहे हैं और अपनी विस्तारवादी सोच प्रदर्शित कर रहे हैं। यह नए संसद भवन के उद्घाटन से भी प्रकट होता है जहां अखंड भारत का एक भित्तिचित्र लगाया गया है। इसमें पाकिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल, भूटान और श्रीलंका को भारत के हिस्से के रूप में दर्शाया गया है। संसदीय कार्यमंत्री प्रहलाद जोशी ने ट्वीट कियाः 'हमारा स्पष्ट संकल्प है अखंड भारत'। जोशी ने कहा 'अखंड भारत की अवधारणा प्राचीन भारतीय संस्कृति से आई है। संसद का नया भवन भारतीय संस्कृति के विभिन्न पहलुओं को दर्शाता है, जो भारत के विभिन्न क्षेत्रों और उनके सभी आयामों का प्रतिनिधित्व करता है।' एक अन्य बीजेपी नेता मनोज कोटक ने ट्वीट किया "नए संसद भवन में दर्शाया गया अखंड भारत एक शक्तिशाली और आत्मनिर्भर भारत को दर्शाता है।"

भारत सरकार के अधिकृत प्रवक्ता अरिंदम बागची ने कहा, 'इस भित्तिचित्र में अशोक साम्राज्य दिखाया गया है और यह उसके (अशोक) द्वारा अपनाई गई और प्रचारित उत्तरदायी और जनोन्मुखी शासन की अवधारणा को दर्शाता है।"

पाकिस्तान और नेपाल की सरकारों ने बीजेपी नेताओं द्वारा अखंड भारत की बातें करने पर चिंता जाहिर की है। यह काबिलेगौर है कि ये नेता चीन द्वारा भारत की भूमि के एक बड़े टुकड़े पर कब्जा जमाने पर चुप हैं। अखंड भारत की परियोजना आरएसएस के दिमाग की उपज है। महात्मा गांधी ने यह एकदम साफ कर दिया था कि बर्मा और श्रीलंका जैसे देशों के सन्दर्भ में भारत की किसी तरह की साम्राज्यवादी महत्वाकांक्षाएं नहीं हैं। भारत ने अपनी सीमाओं को स्वीकार किया और अपने पड़ोसी देशों से कूटनीतिक सम्बंध स्थापित किए। इसी दिशा में दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन (सार्क) की स्थापना हुई और भारत ने इसकी गतिविधियों में उत्साह से भागीदारी की। सार्क के कारण दक्षिण एशियाई देशों में संस्कृति, शिक्षा और स्वास्थ्य जैसे क्षेत्रों में परस्पर सहयोग बढ़ा और अंतर्देशीय पर्यटन में भी बढ़ोत्तरी हुई। पिछले कुछ सालों से सार्क की गतिविधियां ठप हैं।

क्या अखंड भारत का यह मतलब है कि भारत इन देशों पर हमला कर उन पर कब्जा कर लेगा और फिर दिल्ली में बैठा बादशाह (जो पहले से ही बादशाह की तरह व्यवहार कर रहा है।) उन पर शासन करेगा। इस तरह का विस्तारवाद, केवल संकीर्ण राष्ट्रवाद पर आधारित देशों को शोभा देता है। हिटलर के राज में जर्मनी इसका एक उदाहरण है। राममनोहर लोहिया और अन्यों ने भारत और पाकिस्तान का महासंघ बनाने की बात कही थी। इस सन्दर्भ में सार्क का अनुभव अत्यंत सकारात्मक था, परंतु भारत में बढ़ती साम्प्रदायिकता और पाकिस्तान, श्रीलंका और म्यांमार जैसे देशों में कट्टरपंथी ताकतों के बढ़ते बोलबाले के कारण सार्क मृतप्राय हो गया है।

हमें अगर एक होना है, तो क्षेत्रीय सहयोग ही एकमात्र रास्ता है। हमें सीमाओं को सेतु बनाना होगा। यह एक सपना लग सकता है। परन्तु यूरोपियन यूनियन इसका उदारण है कि किस प्रकार लम्बे समय तक एक–दूसरे से युद्धरत रहे देश एक हो सकते हैं। आज पूरे यूरोप में एक मुद्रा और एक वीसा है। देशों की सीमाएं खुली हुई हैं और शिक्षा, स्वास्थ्य, पर्यटन और लगभग हर अन्य क्षेत्र में यूरोप के देश एक साथ मिलकर काम कर रहे हैं और एक बेहतर यूरोप बनाने का प्रयास कर रहे हैं। हां, पिछले कुछ समय से कतिपय महाशक्तियों की महत्वाकांक्षाओं के कारण दुनिया में उथलपुथल ज़रूर मची हुई है।

हमें अखंड भारत की जरूरत नहीं है। हमें क्षेत्रीय सहयोग की ज़रूरत है ताकि दक्षिण एशिया के देश अपनी–अपनी सरकारों को एकाधिकारवादी प्रवृत्तियों से मुक्तकर आम आदमी की जिंदगी बेहतर बनाने की दिशा में काम कर सकें। संसद में लगे भित्तिचित्र को अशोक के साम्राज्य के उच्चतर मूल्यों का प्रतिनिधि माना जाना चाहिए। अशोक का साम्राज्य जनकल्याणकारी था, विस्तारवादी नहीं। विस्तारवादी तानाशाहों ने अपने और अपने आस–पास के देशों को बर्बाद करने और लाखों लोगों का खून बहाने के अलावा कुछ हासिल नहीं किया।

(अंग्रेजी से रूपांतरण अमरीश हरदेनिया)

संयुक्त वक्तव्य

हमारा मणिपुर और हम

जो इतिहास से सबक नहीं सीखते, इतिहास उन्हें सबक सिखाता है!

हमारा इतिहास हमें बताता है कि जब आप गलत मंशा से अपनी आबादी के छोटे हिस्से को भी उकसाते हैं तो देश का बंटवारा हो जाता है; जर्मनी का इतिहास बताता है कि जब आप अपने अधिकांश लोगों को उकसाते हैं, तो ऐसा नरसंहार होता है कि विश्वयुद्ध की आग धधक उठती है; सीरिया, सोमालिया, पाकिस्तान और अफगानिस्तान का इतिहास बताता है कि जब आप पूरी–की –पूरी जनता को उकसा कर उन्मत्त बना देते हैं तो एक कभी न खत्म होने वाला गृहयुद्ध शुरू होता है। देश हिंसक भीड़ में बदल जाता है जिसमें हर कोई दूसरे को नोच खाने को तैयार रहता है। इसलिए यह जरूरी सवाल उठता है कि सरकार नाम की यह जो संस्था हमने बना रखी है, उसका कम–से–कम क्या औचित्य है ? हमारा–आपका और हर नागरिक का जवाब एक ही होगा : यह कम–से–कम इतना तो करे कि देश के भीतर कानून–व्यवस्था बनी रहे – और देश बाहरी आक्रमणों से सुरक्षित रहे। जो इतना भी न कर सके वह न तो सरकार बनने लायक है, न वह सरकार रखने लायक है।

अपने मणिपुर की खिड़की जब हम देखते हैं तो लगता है कि सरकारों ने अपना औचित्य खो दिया है। मणिपुर की जनता को धर्म–जाति–कबीलों आदि में बांट कर दोनों सरकारों ने आज वहां ऐसी आग लगाई है जिसमें मणिपुर का इतिहास व वर्तमान दोनों धू–धू कर जल रहे हैं, और कुछ है कि जो दिल्ली व इंफाल में अपनी बांसुरी बजा रहे हैं। हम कहना चाहते हैं कि पिछले कई महीनों से मणिपुर में जो आग धधक रही है, जिस तरह मणिपुरी मैतई और कुकी जनजातियां एक–दूसरे की जान ले रही हैं, घर–बस्ती जला रही हैं, सड़कों पर विध्वंस का भयावह दृश्य बना हुआ है, वह सरकारी उकसावे व छिपे समर्थन से चल रहा एक सांप्रदायिक दंगा ही है। न पुलिस, न पारा मिलिट्री वहां कोई गंभीर, प्रभावी भूमिका निभा पा रही है। दोनों सरकारों को विषवमन करने, नागरिकों के खिलाफ घृणा व हिंसा फैलाने तथा चुनाव की तैयारी करने से फुर्सत ही नहीं है। जो गृह न बचा सके, वह कैसा गृहमंत्री है !

क्या हमें राष्ट्र का ऐसा विनाश देखते रहना चाहिए ? क्या सरकार जो कहे वही हम सुनें; सरकार जो दिखाए वही हम देखें और सरकार जो प्रचार करे, उसे ही हम सत्य मानें ? अगर ऐसा है तब तो जनता की जरूरत क्या है, हमारी भूमिका क्या है और इससे भी बड़ी बात यह कि लोकतंत्र का मतलब क्या है ? लोकतंत्र का मतलब ही होता है : लोक की मुट्ठी में तंत्र! यहां तो तंत्र सर पर सवार ही नहीं है, अपने स्वार्थ के लिए लोगों के सर कटवा रहा है!

हम भारत के युवा और नागरिक मणिपुर के अपने भाई–बहनों से कहना चाहते हैं कि एक–दूसरे की जान लेने तथा घरों–दुकानों–दफ्तरों को आग लगाने, मंदिरों–गिरिजाघरों का तोड़ने से हासिल कुछ भी नहीं होगा। हमें एक–दूसरे को नहीं, गलत चाल चलने वाले शासकों को हराना है। न्याय के लिए लड़ने के शांतिपूर्ण तरीके भी हैं जो न केवल न्याय दिलाते हैं बल्कि अन्यायी को रास्ते से हटाते भी हैं। मणिपुर के मैतेई तथा कुकी भाइयों से हम पूछना चाहते हैं कि मणिपुर ही न बचा तो हम बच सकेंगे क्या ? असली सवाल तो प्रगतिशील मणिपुर के अस्तित्व का है।

सरकारों और जनता के हृदय में मनुष्यता जगे, ऐसी प्रार्थना करने के लिए देश भर में 1 जुलाई को शांति और सद्भावना दिवस का आयोजन होगा जिसमें सर्वधर्म प्रार्थना, सरकारों से सद् विवेक का निवेदन, मणिपुर के भाई–बहनों की समस्या से देश को अवगत कराना जैसे कार्यक्रम किए जायेंगे।

गांधीजन और सर्वोदय के कार्यकर्त्ताओं के नेतृत्व में देश भर के सभी धर्म–जाति–प्रदेश के प्रतिनिधियों की एक टोली जल्दी ही मणिपुर के लिए रवाना होगी। सरकारों से अपील है कि शांति की इस पहल को सहूलियत व सहयोग दें। जहां सरकारें पहुंचने से डरती हैं, सेना का पहुंचना संभव नहीं वहां अहिंसक शांति सेना पहुंचती भी है और कारगर भी होती है। मणिपुर के लोगों से, मणिपुर की सरकार और केंद्र की सरकार से निवेदन है कि नागरिकों की इस पहल को एक मौका दें। यह महात्मा गांधी का रास्ता है जिसका सम्मान किया जाना चाहिए। हम कहना चाहते

हैं कि जो इतिहास से सबक नहीं सीखते, इतिहास उन्हें सबक सिखाता है।

सरकारों से हमारी अपील है कि शांति की इस नागरिक पहल को समर्थन व सहयोग दें। शांति हम सबकी जरूरत भी है और वही हमारी ताकत भी है।

गांधी शांति प्रतिष्ठान, गांधी स्मारक निधि, राष्ट्रीय गांधी संग्रहालय, सर्व सेवा संघ, राष्ट्रीय युवा संगठन, बेहतर देश–दुनिया के लिए महिलाएं द्वारा प्रसारित।

... ...

हम देश से कहना चाहते हैं!

हम गांधीजन पिछले लंबे समय से देख रहे हैं कि 2014 में केंद्र व राज्यों में हुए राजनीतिक परिवर्तन की काली छाया गांधीजी के विचारों व कार्यों पर पड़ रही है। हम कहना चाहते हैं कि केंद्र व कुछ राज्य सरकारों का यह रुख अकारण है। राजनीतिक सत्ता न हमारी दिलचस्पी का विषय रहा है, न हम उसकी बहुत कीमत ही करते हैं। लेकिन इसके साथ ही हम यह बताना भी जरूरी समझते हैं कि सरकारें क्या और कैसे कर रही हैं, इस पर हम गहरी नजर ही नहीं रखते हैं बल्कि हम अपना आकलन जाहिर भी करते रहते हैं। यह हमारी नैतिक जिम्मेवारी है। इसी कारण 1974 में हम कांग्रेस के खिलाफ गए। उस संघर्ष का परिणाम भारतीय लोकतंत्र का एक अमिट अध्याय ही बन गया। हम विनम्रता से कहना चाहते हैं कि हमारी तटस्थता को हमारी उदासीनता मानने की गलती सरकारें न करें। इसलिए गांधी–परिवार के साथ कैसा रिश्ता रखना है, इसका फैसला राजनीतिक दलों व सत्ताओं को खुद ही करना पड़ता है। हम गांधी–विचार के प्रतिनिधि महसूस कर रहे हैं कि हमारे साथ योजनापूर्वक गलत, बुरा और असंवैधानिक व्यवहार किया जा रहा है। गांधी की मूर्तियों के सामने सर झुकाना व गांधी–विचार व संस्थानों को कुंद करना, यह दोहरा खेल खतरनाक व विनाशकारी है।

देश में जगह–जगह गांधी संस्थाओं में घुसपैठ की कोशिशें हो रही हैं। गुजरात विद्यापीठ, साबरमती आश्रम आदि की वारदातें अभी धूमिल नहीं हुई थीं कि वाराणसी के राजघाट का गांधी–परिसर इनके निशाने पर आया है। लोकनायक जयप्रकाश द्वारा स्थापित समाज विज्ञान का प्रतिष्ठित केंद गांधी विद्या संस्थान इनकी कुचेष्टाओं से निस्तेज पड़ा था। अब उस पर कब्जा करने की कोशिश हुई है। सर्व सेवा संघ का हमारा परिसर भी नाना बहानों से हथियाने की कोशिशें चल रही हैं। इसके खिलाफ हमारा सत्याग्रह वाराणसी में चल रहा है जिसकी राष्ट्रीय अभिव्यक्ति 17 जून, 2023 को राजधानी दिल्ली में हुई। गांधी–जेपी की विरासत पर हो रहे हमलों के खिलाफ तथा गांधी विद्या संस्थान और सर्व सेवा संघ पर सरकार द्वारा कब्जे की कोशिशों की समाप्ति तक हमारा सत्याग्रह संघर्ष जारी रहेगा। इस निश्चय के साथ हमारा राष्ट्रीय प्रतिरोध सम्मेलन पूरा हुआ है। सर्व सेवा संघ परिसर में जयप्रकाश–गांधी प्रतिमा पर चल रहा धरना सारे गांधीजनों की साझा जिम्मेवारी है। जब भी वाराणसी व सर्व सेवा संघ के साथी सत्याग्रह में हमारी उपस्थिति चाहेंगे, हम सब वहां पहुंचेंगे। यह लड़ाई गांधी विद्या संस्थान के नाम से शुरू जरूर हुई है लेकिन यह जमीन बचाने या संस्था का कब्जा रोकने भर की लड़ाई नहीं है। ये सब तो प्रतीक हैं। असली लड़ाई तो लोकतंत्र व संविधान को कमजोर करने वाली ताकतों के खिलाफ है। यह सरकार यदि अपना रवैया नहीं बदलती है तो यह उसका फैसला होगा। गांधी से वे ऐसी लड़ाई मोल लेना चाहते हैं तो ईश्वर इन्हें सदबुद्धि दे। हम कहना चाहते हैं कि 2023 में होने वाले विधान सभा के चुनाओं से लेकर 2024 के लोकसभा चुनाव तक, गांधीजनों की इस लड़ाई की छाया पड़ेगी। चुनाव उन्हें करना है। वे लड़ाई चुनते हैं तो यह लड़ाई जारी रहेगी और हम सावधान व संगठित रहेंगे कि इन सभी चुनावों में भारतीय जनता पार्टी व इसके सहयोगी दलों की निर्णायक हार हो। समाज परिवर्तन की हमारी लड़ाई जारी रहे इसके लिए जरूरी हो गया है कि समाज में सत्ता परिवर्तन की ताकत व समझ पैदा की जाए।

हम राजनैतिक सत्ता के नहीं, जनता की राजनीतिक शक्ति के साधक हैं। हम उस मोर्चे से पीछे नहीं हटेंगे। *(सर्व सेवा संघ व "गांधी–जेपी विरासत बचाओ अभियान" द्वारा जारी।)*

गांधी दुनिया से कभी खत्म नहीं हो पायेंगे

श्रवण गर्ग

राष्ट्रपिता की एक बार फिर हत्या की जा रही है। पहले उनके शरीर का नाश किया गया। फिर उनके आश्रमों और उनकी स्मृतियों से जुड़े प्रतीकों पर हमला किया गया। अब उन्हें मुगलों के साथ–साथ इतिहास और पाठ्यपुस्तकों से या तो बाहर किया जा रहा है या फिर उनकी हत्या और उनके हत्यारों से जुड़े संदर्भों को सत्ता की जरूरतों के मुताबिक संशोधित किया जा रहा है। मानकर चला जा रहा है कि ऐसा निर्विरोध कर दिए जाने के बाद गांधी की समाज में वैचारिक, आध्यात्मिक और नैतिक उपस्थिति पूरी तरह खत्म कर दी जाएगी।

सांप्रदायिक हिंसा के साम्राज्य के प्रति धार्मिक स्वीकृति प्राप्त करने के लिए 'सर्व धर्म समभाव' की बात करने वाले गांधी को उसके प्रत्येक अवतार में समाप्त किया जाना संघ की सत्ता के लिए आवश्यक हो गया है। बहस का विषय अब यही बचा है कि उक्त उपक्रम विद्यार्थियों का भार कम करने के लिए किया जा रहा है या फिर अपने अपराध बोधों की सूचियों से पाठ्यक्रमों को भारहीन करने के लिए किया जा रहा है ?

किसी से छुपा नहीं रह गया है कि गांधी को मारने का काम उनके स्थान पर सावरकर की प्राण प्रतिष्ठा करने के लिए हो रहा है। निश्चित ही गांधी और सावरकर एक साथ नहीं रह सकते। धर्म विशेष की सता की स्थापना में एक के लिए दूसरे को हटाया जाना जरूरी है। इस काम को संपन्न करने के लिए 30 जनवरी, 1948 और 26 मई, 2014 की अवधि के बीच कल्पना नहीं की जा सकती थी। दोनों ही तारीखों का भारत की आत्मा के साथ गहरा सम्बन्ध स्थापित हो गया है। इतिहास के विद्यार्थी भारत के दूसरे विभाजन की तारीख अब ज्यादा आसानी से तलाश कर सकते हैं।

राष्ट्रपिता की हत्या के बाद विशेष अदालत में मुकदमा चलाया गया था। अदालत द्वारा निर्दोष साबित कर दिए जाने के बाद नवम्बर 1966 में गठित एक–सदस्यीय कपूर आयोग ने अपनी रिपोर्ट में कहा था : 'गांधी की हत्या का षड़यंत्र सावरकर और उनके अनुयायियों ने रचा था इसी निष्कर्ष पर आना पड़ता है।' सावरकर का तब तक निधन हो चुका था।

गांधी का विचार और उनकी जरूरत वर्तमान की विभाजनकारी राजनीति के लिए चरखे से काते गए सूत के बजाय मशीनों से बुने गए पॉलिएस्टर की ऐसी नकाब हो गई है जिसके पीछे उनकी सहिष्णुता, अहिंसा और लोकतंत्र का मजाक उड़ाने वाले क्रूर और हिंसक चेहरे छुपे हुए हैं। ये चेहरे गांधी–विचार की ज़रा–सी आहट को भी किसी महामारी की दस्तक की तरह देखते हैं और अपने अनुयायियों को उसके हिंसक प्रतिरोध के लिए तैयार करने में जुट जाते हैं।

दक्षिणपंथी बहुसंख्यकवाद को हथियारों से सज्जित करने की शर्त ही यही है कि गांधी द्वारा प्रतिपादित धार्मिक सहिष्णुता की हत्या करके उसे अल्पसंख्यक विरोधी धार्मिक उन्माद में बदल दिया जाए। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए गांधी को वैचारिक रूप से खत्म किया जाना जरूरी है। हिंदुत्व के कट्टरपंथी समर्थकों के लिए यह एक दुर्भाग्यपूर्ण क्षण रहा होगा कि गांधी को उनके शरीर के साथ ही विचार रूप में भी राजघाट पर नहीं जलाया जा सका। इन समर्थकों का मानना हो सकता है कि इतिहास के साथ छेड़छाड़ और पाठ्यपुस्तकों में क्रूर फेर–बदल के जरिए उस अधूरे रहे काम को पूरा करने का वर्तमान से ज्यादा उपयुक्त अवसर आगे नहीं आ सकेगा।

एक डरे हुए राष्ट्र की मानसिकता के कारण हम इस बात को स्वीकार करने में संकोच कर रहे हैं कि विचार रूप में गांधी की हमें कोई जरूरत नहीं बची है। गांधी की एक व्यक्ति और विचार के रूप में तभी तक जरूरत थी जब तक कि राष्ट्र की महत्वाकांक्षाएं अहिंसक थीं। जैसे–जैसे नागरिकों के पास हिंसक विचारों और मारक हथियारों का ज़खीरा बढ़ता गया, उजागर होने लगा कि सत्ता गांधी की उपस्थिति का इस्तेमाल हिंसा के लिए हथियारों की गरीबी और औद्योगिक पिछड़ेपन के कारण ही कर रही थी। अब सत्ता की नज़रों में गांधी दारिद्र्य, दारुण्य और दया का प्रतीक बन कर रह गए हैं। उसके लिए फाइव ट्रिलियन की ➪

प्राकृतिक खेती और जल संरक्षण का एक बेहतरीन प्रयोग

भारत डोगरा

संतोष एक ऐसा मेहनती किसान है जिसने अपनी पत्नी चुन्नी देवी की सहायता से एक समय बंजर पड़ी भूमि से ही न्यूनतम लागत पर भरपूर सब्जियों का उत्पादन प्राप्त किया है व हजारों रुपए अर्जित किए हैं। भैरता गांव (महोबा प्रखंड, हमीरपुर जिला, उत्तर प्रदेश) में बंजर पड़ी भूमि पर संतोष ने एक बीघे के लगभग चौथे हिस्से के प्लाट पर खूब मेहनत की। गोबर, गो–मूत्र व कुछ अन्य पोषक तत्त्वों से मिली खाद से यहां की मिट्टी को उपजाऊ बनाया। फिर उसमें कोई 15 तरह की सब्जियां लगाईं।

बहु–स्तरीय या मल्टी–लेयर वाटिका में बेलों, कंदों, छोटे व बड़े पौधों को इस तरह लगाया गया कि यह एक–दूसरे के पूरक, रक्षक व सहायक हों – जैसे किसी बड़े पौधे के तने पर किसी बेल का चढ़ना या बड़े पौधे की छाया में छोटे व कोमल पौधे का पनपना। इसके लिए लकड़ी के खंभों व रस्सी या तार का जाल भी बिछाया गया।

संतोष और चुन्नी देवी ने रासायनिक खाद व कीटनाशक दवा का कोई उपयोग नहीं किया। पूरी तरह प्राकृतिक खेती के बल पर भरपूर फसल प्राप्त की जो उच्च गुणवत्ता की है। संतोष ने बताया कि इससे उनका स्वास्थ्य भी सुधरता है व जो लोग यह सब्जी खरीदते हैं उनका भी। संतोष ने विभिन्न सब्जियों व फसलों के बीज बचाने के कार्य में भी भरपूर योगदान दिया है।

इसी प्रखंड के अस्तरा गांव में कृष्ण कुमार एक अधिक साधन संपन्न किसान हैं जो पहले रासायनिक खाद पर आधारित खेती करते थे, पर इससे उत्पन्न समस्याओं और बढ़ते खर्च के कारण विकल्प खोज रहे थे। यही तलाश उन्हें प्राकृतिक खेती की ओर ले गई। वे बताते हैं कि उन्होंने प्राकृतिक खेती को अपना कर गेहूं, चना, सरसों की खेती में अच्छा उत्पादन प्राप्त किया है व उनकी लागत भी बहुत ही कम हो गई है। जहां खेती पहले बोझ बन रही थी, वह अब टिकाऊ तौर पर लाभप्रद लगने लगी है।

कृष्ण कुमार एक प्राकृतिक कृषि केन्द्र का संचालन भी कर रहे हैं जिसमें गोबर, गोमूत्र व अन्य पोषक तत्त्व

➪इकानमी में प्रवेश करने वाले राष्ट्र को इस तरह के प्रतीकों के साथ नहीं रखा जा सकता।

दक्षिण अफ्रीका की 7 जून 1893 की घटना की तरह अगर आज की तारीख में कोई सवर्ण किसी मोहनदास करमचंद गांधी को ट्रेन से उतारकर प्लेटफार्म पर पटक दे तो कितने लोग उसकी मदद के लिए आगे आने की हिम्मत करेंगे, दावे के साथ नहीं कहा जा सकता। विदेशों में बसने वाले भारतीय या एशियाई मूल के नागरिक आए–दिन अपने ऊपर होने वाले नस्लीय हमले चुपचाप सहते रहते हैं। इनमें लूट और हत्याएं भी शामिल होती हैं। इन हमलों के खिलाफ कहीं कोई छटपटाहट नहीं नजर आती।

गांधी की प्रतिमाओं के साथ विदेशों में होने वाले अपमान की घटनाओं के प्रति तो सरकार विरोध व्यक्त करती है पर जब अपने ही देश के किसी शहर में गोडसे की मूर्ति बिना किसी विरोध के स्थापित हो जाती है या कहीं और राष्ट्रपिता के पुतले पर सार्वजनिक रूप से गोलियां दागकर तीस जनवरी 1948 की घटना का गर्व के साथ मंचन किया जाता है तो कोई पीड़ा नहीं होती।

सवाल यह है कि क्या देश के शहरों और सड़कों के नाम बदल देने, इतिहास के पन्नों से मुगल शासकों को हटा देने और कुछ करोड़ पाठ्यपुस्तकों में राष्ट्रपिता की हत्या से जुड़े वास्तविक संदर्भों के स्थान पर संशोधित पाठ जोड़ देने से महात्मा गांधी का नाम दुनिया के दूसरे मुल्कों से भी मिट जाएगा ? भाजपा और संघ को चाहे जरूरत नहीं हो, दुनिया का काम गांधी के बिना कभी भी नहीं चल सकेगा।

(Attp://web.whatsaapp.com)

आधारित खाद व हानिकारक कीड़ों बीमारियों से बचाव के घोल का अतिरिक्त उत्पादन भी किया जाता है ताकि अन्य किसान भी इन्हें प्राप्त कर सकें। वे कहते हैं कि सरकार को सबसिडी व सहायता ऐसी प्राकृतिक खेती के लिए देनी चाहिए, न कि रासायनिक खेती के लिए।

कृष्ण कुमार बताते हैं कि प्राकृतिक खेती करने से कम समय में ही मिट्टी भुरभरी हो गई है। उसमें नमी देर तक टिकती है, उसमें केंचुए लौटने लगे हैं। वे कहते हैं कि भविष्य प्राकृतिक खेती का है। अनेक किसान उनकी प्राकृतिक खेती को देखने आते हैं व इसे अपनाना चाहते हैं। वे गेहूं की बढ़िया किस्म को भी नवजीवन देने में जुटे हैं व इसे प्रदर्शन प्लाट में उगा रहे हैं।

इसी क्षेत्र के रवाड़ी गांव में वृंदावन अपने पुत्र नरेन्द्र के साथ अग्रणी प्राकृतिक खेती के प्रचारक बन गए हैं। वृंदावन ने प्राकृतिक खेती अपनाने की पहल की व बहुस्तरीय सब्जी की वाटिका की सफलता में गांव के लिए नया मार्ग खोला। उनकी इस सफल खेती को अन्य लोग देखते हैं व इस ओर आकर्षित भी हो रहे हैं। जिन्होंने पहले सवाल उठाए थे उन्होंने जब देखा कि वृंदावन ने पहले सीजन में ही अन्य सब्जियों के अतिरिक्त 30,000 रुपए की मूली बेची है तो वे भी प्राकृतिक खेती की संभावनाओं पर विचार करने लगे। बीज बैंक के माध्यम से भी वृंदावन प्राकृतिक खेती में अपना योगदान दे रहे हैं।

इन तीनों किसानों की सफलता में एक सामान्य बात यह है कि वे सभी 'युवा कौशल विकास मंडल' व 'सृजन संस्थाओं' के प्राकृतिक खेती के प्रसार के प्रयासों से जुड़े हैं जो बिवाल नामक व्यापक कार्यक्रम के अन्तर्गत हुए। इसके साथ ही बीज–बैंक स्थापित करने व लुप्त हो रहे बेहद उपयोगी विविध फसलों, जैसे–मोटे अनाजों (मिलेट) व गेहूं की बढ़िया किस्मों को नया जीवन देने के प्रयास भी हो रहे हैं। इस प्रयास में गोबर, गोमूत्र व चिकनी मिट्टी से तैयार गमलों व छिद्रों वाली ईंटों को भी तैयार किया गया है जिनमें पौधे अच्छे पनपते हैं।

मौदहा व सुमेरपुर प्रखंडों (जिला हमीरपुर, उत्तर प्रदेश) के गांवों में ये प्रयास हो रहे हैं व मात्र दो वर्षों में इन प्रयासों से प्राकृतिक खेती के प्रति झुकाव में महत्त्वपूर्ण वृद्धि हुई है। गुरदाहा, भैरता, कड़ैया, रीवन, अरतरा चदंसुरवा आदि गांवों में यह रुझान अधिक है, पर सभी 22 गांवों में कम या अधिक कुछ सफलता अवश्य मिली है। 'युवा कौशल विकास मंडल' के समन्वयक मनोज कुमार दावा करते हैं कि उनके कार्यक्षेत्र में पांच वर्ष में लगभग 50 प्रतिशत या अधिक किसान प्राकृतिक खेती अपना लेंगे। प्राकृतिक खेती के उत्पादों की बिक्री के लिए 'किसान उत्पादन संगठन' (एफपीओ) भी गठित किया गया है।

युवा कार्यकर्त्ता अंकुश के अनुसार प्राकृतिक खेती के साथ–साथ जो जल–संरक्षण के महत्त्वपूर्ण कार्य हुए हैं उसने भी इस सफलता में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। बड़ा तालाब, दानेबाबा तालाब, बड़ीमाता तालाब जैसे लगभग 12 तालाबों से इन संस्थाओं के प्रयासों से मिट्टी हटाई गई। किसानों ने इस मिट्टी को अपने खेतों में पहुंचाकर उन्हें अधिक उपजाऊ बनाया। इनमें से कुछ तालाबों में अब 12 महीने पानी रह रहा है। इससे पशुओं की प्यास बुझाने में बहुत मदद मिली है। पहले गर्मी के दिनों में इन पशुओं की कठिनाइयां यहां बहुत बढ़ गई थीं। अब जलवायु बदलाव व बढ़ते गर्मी के प्रकोप के समय में ऐसे जल संरक्षण का महत्त्व और भी बढ़ गया है।

तालाबों की सफाई के बाद उनमें अधिक जल एकत्र होता है व पानी का रिचार्ज भी अधिक होता है। कुंओं का जल–स्तर बढ़ गया है, हैंडपंपों से बेहतर पानी मिलता है। सिंचाई भी पहले से अधिक हो रही है। विभिन्न नालों पर 'दोहा' नाम के विशेष गड्ढे बनाए गए हैं जिनमें बरसाती पानी देर तक टिकता है। इस तरह भी पशुओं के लिए पानी, सिंचाई व रिचार्ज की संभावनाओं को बढ़ाया गया है। ग्राम समुदायों में वृक्षों के प्रति जागृति उत्पन्न करने से अनेक गांववासी 'तरु मित्र' व 'वृक्ष मित्र' के रूप में आगे आए हैं व 'वृक्ष गंगा अभियान' के अन्तर्गत अनेक गांवों में वृक्षारोपण से हरियाली बढ़ी है।

इस तरह प्राकृतिक खेती और जल संरक्षण के कार्यों के साथ–साथ आगे बढ़ने से कई तरह की समस्याएं कम हुई हैं व टिकाऊ विकास की अनेक संभावनाएं बढ़ी हैं। ग्रामवासी तरह–तरह की रचनात्मक गतिविधियों से जुड़े हैं व उनमें टिकाऊ विकास की नई संभावनाएं तलाशने के लिए उत्साह बढ़ा है। **(सप्रेस)**

अखबारी कतरन :

सेंगोल, जो झुके नहीं

पी. चिदंबरम

तिरुवल्लुवर, अलंगो आदिगल, अव्वय्यर और संगम कवि अगर सेंगोल के बारे में माननीय प्रधानमंत्री, ऐतिहासिक तथ्यों को तोड़–मरोड़कर पेश करने वाले व्याख्याकारों और भाजपा के फिरकीबाजों को चौंकाने वाली व्याख्या सुनेंगे, तो वे अपनी कब्र में बेचैन हो जाएंगे। उनकी व्याख्या के हिसाब से, सेंगोल लौकिक शक्ति का प्रतीक बन गया है। काल्पनिक रूप से एक पुजारी या एक पूर्व शासक द्वारा नए शासक को सेंगोल सौंपने को सत्ता के हस्तांतरण के रूप में निरूपित किया गया है।

इतिहास और एक नैतिक सिद्धांत को जिस कदर बेशर्मी से तोड़ा–मरोड़ा जा सकता है, उसका खुला प्रदर्शन 28 मई, 2023 को हुआ। तुरही बजाने वालों ने तुरही बजाई, दरबारियों ने शासक की चापलूसी की और संसद के दोनों सदनों को अपने भीतर समेटने वाली एक नई इमारत का उद्घाटन एक आभासी राज्याभिषेक में बदल गया। लार्ड माउंटबेटन और सी. राजगोपालाचारी (राजाजी) को एक ऐसे शाही समारोह का गवाह बनने के लिए बुलाया गया था, जो एक लोकतांत्रिक गणराज्य के लिहाज से बेतुका था। यह बेहद दुर्भाग्यपूर्ण था कि जिस आयोजन को धर्मनिरपेक्ष रहना चाहिए था, उसमें धार्मिकता का एक बड़ा पुट देने के लिए शैव अदीनम (मठ) के स्वयंभू प्रमुखों को बुलाया गया।

जिन लोगों ने अपने टेलीविजन स्क्रीन पर इस निर्देशित अनुष्ठान की कार्यवाही देखी होगी, उन्होंने निश्चित रूप से इसकी तुलना 25 जुलाई, 2022 को राष्ट्रपति मुर्मू के सादगीपूर्ण शपथ ग्रहण समारोह से की होगी और लोग, खासकर कर्नाटक के निवासी इस बात पर अचरज कर रहे होंगे कि "किसने किसको सत्ता सौंपी ?"

कवि और सेंगोल की परिभाषा

31 ईसा पूर्व में तमिल कवि और दार्शनिक तिरुवल्लुवर ने अविस्मरणीय छंद लिखे, जो प्रसिद्ध तिरुक्कुरल में संकलित हैं। संपत्ति शीर्षक खंड में, उन्होंने सेंगोनमाई (नेक राजदंड) और सेंगोनमाई (क्रूर राजदंड) नाम के दो अध्यायों को शामिल किया है। दोहा संख्या 546 में लिखा है –

'वेलांद्रि वेंद्री तरुवथु मन्नावन/कोल अदुउम कोडथु एनिन'

यहां कोल का मतलब राजदंड से है। इस छंद का अर्थ है कि 'राजा की जीत भाला नहीं, बल्कि कोल (राजदंड) तय करता है'। लेकिन कवि के अंतिम तीन शब्दों पर ध्यान दें : कोल, जो झुकेगा नहीं। राजदंड को सीधी अवस्था में होना चाहिए। उसे इस ओर या उस ओर झुका हुआ नहीं होना चाहिए। शपथग्रहण के दौरान प्रधानमंत्री द्वारा ली गई शपथ में भी यही भाव मौजूद है – "... मैं बिना किसी भय या पक्षपात, राग या द्वेष के संविधान और कानूनों के मुताबिक सभी लोगों के साथ न्याय करूंगा'। कोल एक नेक शासन का प्रतीक है, न उससे ज्यादा और न उससे कम। अगर यह कोल झुकता नहीं है, तो वह एक सेंगोल होगा। लेकिन अगर यह किसी तरफ झुकता है, तो यह एक क्रूर शासन का प्रतीक होगा।

सेंगोल का आशय एक नेक शासन से है, खालिस सत्ता से नहीं। राजदंड धारण करने वाला शासक सही ढंग से शासन करने का वादा करता है। तिरुवल्लुवर ने सेंगोल को राजा के चार गुणों में से एक के रूप में रखा। 'दान, करुणा, नेक शासन और कमजोरों (गरीबों) की सुरक्षा एक अच्छे राजा के चार गुण हैं.' (कुरल 490) । एक अन्य अध्याय का शीर्षक कोडुंगोनमाई है, जो सेंगोनमाई के उलट है और एक क्रूर या अन्यायपूर्ण शासन के रूप में वर्णित है।

सेंगोल की प्रशंसा करने वाले गीत

एक संगम कवि ने प्रसिद्ध चोल राजा करिकालन की उनके 'अरानोडु पुनर्नंदा तिरनारी सेंगोल' के लिए प्रशंसा की है, जिसका अर्थ है कि उनका बुद्धिमत्तापूर्ण शासन नैतिकता से जुड़ा हुआ था। एक अन्य संगम कवि ने राजा को 'एरेरकु निझंद्रा कोलिन' के रूप में वर्णित किया, जिसका अर्थ है कि राजा ने यह सुनिश्चित किया कि खाद्यान्नों का उत्पादन करने वाले किसानों को कोई परेशानी न हो।

प्रकाशन तिथि 28/06/2023
Delhi Postal Regd. No. DL (C)-05/1423/2022-2024
R.No.21841/1971 Posted at L.P.C.- Delhi. R.M.S.Delhi-6 on 1st, 2nd July, 2023

'सिलप्पाथिकरम' नाम का महाकाव्य लिखने वाले जैन भिक्षु अलंगो आदिगल ने कन्नगी के साथ हुए अन्याय की आलोचना की थी और सेंगोल को झुका देने वाले राजा की बर्बादी की भविष्यवाणी की थी।

जनकवि अव्वयूयर ने सरल भाषा में छंदों की रचना की। उनकी एक प्रसिद्ध कविता में लिखा है :

'जब मेड़ की ऊंचाई बढ़ेगी, तो जलस्तर बढ़ेगा/ जलस्तर बढ़ेगा, तो धान उगेगा/ धान उगेगा, तो परिवार आगे बढ़ेंगे/जब परिवार आगे बढ़ेंगे, कोल (राजदंड) ऊंचा उठेगा/और जब राजदंड सीधा उठेगा, तब राजा की कीर्ति बढ़ेगी'।

एक राजदंड का झुक जाना अन्यायपूर्ण या क्रूरशासन का प्रतीक होगा। किसी एक वर्ग के प्रति पक्षपात या दूसरे के प्रति पूर्वाग्रह नहीं चल सकता। किसी भी समुदाय या धर्म या भाषा के प्रति दुर्भावना के लिए कोई जगह नहीं है।

समकालीन मिसाल अगर लें, तो नफरत फैलाने वाले भाषणों या कानून अपने हाथ में लेने या लव जिहाद या बुलडोजर न्याय के लिए कोई जगह नहीं हो सकती है। उस नागरिकता संशोधन अधिनियम (सीएए) के लिए कोई जगह नहीं हो सकती है, जो किसी भी पड़ोसी देश के मुसलमानों, नेपाल के ईसाइयों एवं बौद्धों और श्रीलंका के तमिलों के साथ भेद भाव करता है। किसानों को व्यापारियों और एकाधिकार जमाने वाले सेठों के रहमोकरम पर छोड़ने वाले 'कृषि कानूनों' के लिए कोई जगह नहीं हो सकती है। कर्नाटक में हाल ही में हुए चुनाव की तरह किसी राज्य के चुनाव में एक नेक शासक की राजनीतिक पार्टी मुसलिम या ईसाई समुदाय के उम्मीदवारों को मैदान में उतारने से इनकार नहीं कर सकती। न ही न्याय की मांग करने वाले पदक विजेता खिलाड़ियों के शांतिपूर्ण विरोध को एक नेक शासक की पुलिस बल प्रयोग करके बंद करा सकती है।

सेंगोल को अपवित्र न करें

राजदंड की सत्ता के साथ तुलना करना सेंगोल की अवधारणा को अपवित्र करना है। लार्ड माउंटबेटन और राजाजी का हवाला देना न सिर्फ इतिहास के साथ तोड़–मरोड़ करना है, बल्कि एक व्यावहारिक वायसराय और एक बुद्धिमान विद्वान–राजनेता को नीचा दिखाना है और उन्हें सहज बुद्धि से रहित करार देना है।

सेंगोल को उस मंच पर सजने दीजिए, जहां लोक सभाध्यक्ष बैठेंगे। इसे सदन की कार्यवाही का मूल साक्षी बनने दीजिए। सेंगोल तभी सीधा खड़ा रह पाएगा, अगर सदन में निर्बाध तरीके से बहस–मुबाहिसा होगा; अगर भाषण और अभिव्यक्ति की आजादी की पूरी स्वतंत्रता होगी; अगर असहमत और असंतुष्ट होने की आजादी होगी; और अगर अन्यायपूर्ण या असंवैधानिक कानूनों के खिलाफ मतदान करने की आजादी होगी। आइए, हम सब यह उम्मीद करें कि सेंगोल और इसके मायने–सेंगोनमाई (नेक शासन) का परचम लहराएगा।

(साभार : जनसत्ता, 4 जून, 2023

श्रद्धांजलि

अमिताभ मिश्र नहीं रहे

स्व. अनुपम मिश्र के बड़े भाई और स्व. सरलाजी एवं भवानी प्रसाद मिश्र के सुपुत्र, शास्त्रीय संगीत के सुर–साधक अमिताभ मिश्र का गत् 1 जून, 2023 को 83 वर्ष की आयु में निधन हो गया। वे पिछले कुछ समय से अस्वस्थ चल रहे थे।

उनका अंतिम संस्कार गाजियाबाद के हिंडन शवदाह–गृह में किया गया।

वे वर्षों तक गांधी स्मारक निधि (राजघाट, नई दिल्ली) परिसर में रहे। गत् करीब दो साल से वसुंधरा, गाजियाबाद स्थिति पारिवारिक निवास में रहने लगे थे। वहीं उन्होंने अंतिम सांस ली।

दिवंगत आत्मा को हमारी हार्दिक श्रद्धांजलि एवं शोक संतप्त परिवार के प्रति हार्दिक–संवेदना! — सं.

स्वामी गांधी स्मारक निधि के लिए राजघाट, नई दिल्ली–110002 से संजय सिंह, गांधी स्मारक निधि द्वारा प्रकाशित व मुद्रित
जैन ऑफसेट प्रिंटर्स, 198/2–1, फारचुन टावर, रमेश मार्केट, नई दिल्ली–110065
सम्पादक – रामचन्द्र राही